International Journal of Applied Research 2019; 5(8): 468-471

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(8): 468-471
www.allresearchjournal.com
Received: 27-06-2019
Accepted: 29-07-2019

पुनीता कुमारी
शोधार्थी, विश्वविद्यालय
हिन्दी–विभाग, ल० ना० मिथिला
विश्वविद्यालय, दरभंगा, भारत

Corresponding Author:
पुनीता कुमारी
शोधार्थी, विश्वविद्यालय
हिन्दी–विभाग, ल० ना० मिथिला
विश्वविद्यालय, दरभंगा, भारत

असगर वजाहत के उपन्यास में आदिवासी जीवन

पुनीता कुमारी

सारांशः
असगर वजाहत की पहचान उपन्यासकार के रूप में उनके 'कैसी आगी लगाई'' नामक उपन्यास से बनी है। तत्पश्चात उन्होंने अनेक उपन्यास की रचना की। उन्होंने अपनी रचनाओं में उपेक्षित तथा अछूती जनजातियों की व्यथा को स्वर देने का प्रयास किया है। 'उपन्यास–त्रयी' के द्वितीय खण्ड 'बरखा रचाई' में आदिवासियों के जीवन की व्यथा और उनके ऊपर हुए अत्याचार तथा शोषण का उन्होंने यथार्थवादी चित्रण किया है। स्वतंत्र भारत में आदिवासियों की तकलीफ तथा कठिनाईयों से भरी जिंदगी की व्यापकता को उन्होंने अपने उपन्यासों में रेखांकित किया है।
प्रस्तुत उपन्यास 'बरखा–रचाई' में विकास के लाभों का लोभ देकर आदिवासियों के जीवन को नरक बनाने से लेकर सरकारी गठजोड़ तथा उत्पीड़न के शिकार जनजातियों की दर्दनाक दास्तान है।
अतः आदिवासियों की जिन्दगी शोषण तथा उत्पीड़न का दस्तावेज है। देश के किसी भी कोने में आदिवासी पूर्णतः सुरक्षित नहीं है। आदिवासी की जिंदगी में आज भी कोई बदलाव नहीं आया है। वास्तव में, औद्योगिकीकरण के नाम पर आदिवासियों को बर्बाद किया जा रहा है। उनकी सोच, उनकी हालत वर्तमान में स्वतंत्रता–पूर्व से भी अत्यधिक बिगड़ गई है।
अतः सरकार द्वारा इन्हें शिक्षा की सम्पूर्ण सहूलियत दी जानी चाहिए, क्योंकि आदिवासियों का सर्वांगीण विकास शिक्षा में है।

प्रस्तावनाः
हिन्दी के मशहूर कथाकार असगर वजाहत ने अपनी रचनाओं में उपेक्षित तथा अछूती जनजातियों की व्यथा को स्वर देने का प्रयास किया है। असगर वजाहत मार्क्सवादी विचारक हैं, इसलिए उनकी रचनाओं में सर्वहारा के लिए समतामूलक समाज या समानता का अधिकार मुख्य रूप से रेखांकित किया गया है। मार्क्सवाद के संबंध में डॉ० राम विलास शर्मा की मान्यता है कि– ''मार्क्सवाद समाज को बदलने और उसे समझने का विज्ञान है।''(1)
असगर वजाहत का बहुचर्चित 'उपन्यास त्रयी' के द्वितीय खण्ड 'बरखा रचाई' में आदिवासियों के जीवन की व्यथा और उनके ऊपर हुए अत्याचार शोषण का यथार्थ वर्णन है। उपन्यास में आदिवासी जीवन की कथा का उल्लेख है, जिसमें जीवन–दर्शन की व्यापकता के साथ आदिवासियों की कठिनाइयों का विस्तार मिलता है।
प्रस्तुत उपन्यास 'बरखा रचाई' में विकास के लाभों को लोभ देकर आदिवासियों के जीवन को नरक बनाने से लेकर सरकारी गठजोड़ तथा उत्पीड़न के शिकार जनजातियों की दर्दनाक दास्तान है। भारत और तिब्बत की सीमा पर स्थित भोटिया जनजाति को जानवर पालकर तथा जंगल में मजबूरन संघर्षमय और शोषित जीवन बिताना पड़ता है। बलीसिंह रावत जैसे शोषण की जिंदगी जीनेवाले पढ़े–लिखे पात्र का उल्लेख किया गया है। औपनिवेशिक युग के पूर्व आदिवासियों की अपनी एक ऐसी स्वतंत्र सत्ता थी, जिसपर उनका एकाधिकार था। जल, जंगल, जमीन तथा अन्य प्रकृति के संसाधनों पर उनका अधिकार था। लेकिन साम्राज्यवादी ताकतें बढ़ने तथा औपनिवेशिक सत्ता मजबूत होने के साथ ही आदिवासियों का शोषण और उत्पीड़न, अन्याय–अत्याचार बढ़ता ही गया। उनके ही संसाधनों पर कब्जा कर लिया गया तथा उन्हें अपनी ही जमीन से बेदखल कर दिया गया। राँची जैसे विशाल शहर की स्थापना का पर्दाफाश असगर वजाहत ने 'बरखा रचाई' उपन्यास में सागर साहब के माध्यम से किया है। राँची में जमीन खरीद–फरोख्त के रिकॉर्ड को दिखाते हुए सागर साहब, साजिद से कहते हैं– ''ये जो आप राँची शहर देख रहे हें, यह आदिवासियों की जमीन पर बसा है। आज यह करोड़ो रूपये की जमीन है.....लेकिन यह किस तरह, कितना पैसा देकर खरीदी गयी है, ये रिकॉर्ड बतायेगा.....कहीं–कहीं.....जमीन खरीदने वालों के नाम नहीं दिये गये है, क्योंकि वे लोग इतने असरदार.....इतने बड़े.....इतने सम्मानित हैं कि चोरों की सूची में उनका नाम दर्ज करने की हिम्मत यहाँ किसी को नहीं है।

ये देखिये.....पाँच एकड़ जमीन.....सौ रुपये में बिकी.....ये देखिये दो एकड़ जमीन.....दस रुपये में.....ये कहानियाँ नहीं है.....लैंड रिकॉर्ड हैं.....अगर चाहें तो मूल बैनामे भी देख सकते है।''(2)

रिकॉर्ड देखने के पश्चात साजिद को हैरत होती है। वह सोचता है कि देश के अन्दर कितने देश है। देश किसका है और विदेशी कौन हैं? आदिवासी सदियों से कंद–मूल खाकर जंगलों में अभावग्रस्त जीवन जीनेवाले भोले–भाले इन्सान हैं, जिनके भोलेपन का फायदा उद्योगपतियों से लेकर सरकार तथा बड़े–बड़े पहचान रखनेवाले लोगों ने उठाया है।

साजिद के माध्यम से एक पढ़े–लिखे प्रतिभाशाली तथा देश के प्रति जिम्मेदार व्यक्ति को उपन्यासकार ने दिखाया है। साजिद सोचने लगता है– ''हमने इन आदिवासियों के साथ वही किया है जो अमरीका में 'रेड इंडियन' के साथ किया गया था। पर इस देश में कोई यह मानता नहीं क्योंकि जिनके पास यह मानने का अधिकार है, उन्होंने ही यह अपराध किया है। आज वे सब आदिवासी बन्धुआ है जिनके पास कल तक जमीन थी। उन्हें यह सजा क्यों मिली है? क्या इसलिए कि वे हमसे ज्यादा चतुर नहीं है।''(3)

थारू जनजाति की व्यथा को उकेरती कथाकार संजीव का उपन्यास 'जंगल जहाँ शुरू होता है' में इन जनजातियों के जीवन संघर्ष और दुःख दर्द का बयां है। इस उपन्यास का पात्र बिसराम के जरिए लेखक ने तमाम खेतिहर मजदूरों की टीस को यूँ अभिव्यक्त किया है– ''पहले चीनी मिले बन्द हुई, फिर खेत बंधक हुए, भैंस गई, मेहरारू, मरन–सेज पर और बेटी को साँप ने डँसा।''(4)

उपन्यास के माध्यम से आदिवासी जीवन यथार्थ को, उनके साथ हो रहे शोषण, दमन, अत्याचार इत्यादि को औपन्यासिक कथ्य के केन्द्र में रखकर उनकी सच्चाइयों तथा कठिनाइयों को सामने लाया जा रहा है। उनके जीवन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण धन या धरोहर जंगल ही खतरे में है। समकालीन उपन्यासकारों ने आदिवासी जीवन–यापन पर आधारित कई उपन्यासों की रचना की है। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद भी हमारे देश में आदिवासियों की जो दुर्दशा है, वह बहुत ही दयनीय है।

'बरखा रचाई' उपन्यास में आदिवासी इलाकों में सारी उम्र गुजारने वाले विनय टंडन लेबर कमिश्नर के माध्यम से साजिद को पता चलता है कि इन आदिवासियों का जीवन जानवरों की तरह है, कोई सरकारी कर्मी या उद्योगपति आता है अपना उल्लू सीधा करता है और चला जाता है। विनय टंडन मध्यप्रदेश के आदिवासी इलाकों के बारे में बताते हैं– ''मध्य प्रदेश के आदिवासी क्षेत्रों में एक समय था जब आदिवासियों को कपड़े के दुकानदार चारों तरफ से नाप कर कपड़ा देते थे। लम्बाई चार गज और चौड़ाई एक गज इधर से.....एक गज उधर से।''(5)

उपन्यास में साजिद और सरयू बन्धुआ मजदूरों के झोपड़ेनुमा घरों का मुआयने करते हुए कहते हैं– ''पूरे घर में जो कुछ भी दिखायी देता था। उस सबको अगर जमा करके बाजार में बेचा जाये तो कोई दो रूपये का भी नहीं खरीदेगा, यह हमारी पक्की राय बनी थी। कुछ चटाइयां, चीथड़े हुए कपड़े, मिट्टी के बर्तन, मिट्टी का दिया और मुश्किल से एक टीन का कनस्तर ही दिखायी पड़ते थे। दूसरी तरफ बड़े–बड़े फॉर्म थे, जिनमें पचास हजार एकड़ जमीन थी। दो हजार एकड़ भगवान के नाम..... हजार एकड़ कुत्ते के नाम.....इसी तरह जमीन पर कब्जा किया गया था।''(6)

लेबर कमिश्नर विनय टंडन साजिद को यह भी बताते हें कि आदिवासी क्षेत्र में आनेवाले पटवारी को सबसे बड़ा अधिकारी समझा जाता था। जब वह मौका–मुआयना करने जाता था तो चारपाई को आदिवासी अपने कंधों पर डालता था और उस चारपाई पर पटवारी बैठता था। तत्पश्चात् सम्पूर्ण गाँव से चंदा इकट्ठा करके पटवारी के भोजन का प्रबंध किया जाता था। पटवारी बहाना बनाकर खाना नहीं खाने का नाटक करता था– ''उसके खाना न खाने से पूरा गाँव डर जाया करता था और हाथ जोड़ता था कि पटवारी खाना खा लें। पटवारी के खाना न खाने से उन्हें कितना नुकसान होगा इसकी वे कल्पना भी नहीं कर सकते थे। पटवारी कहता था ठीक है, मैं बीस रूपये लूँगा तब खाना खाऊँगा। वे किसी– न–किसी तरह उसे रूपये देते थे और तब वह खाना जाता था।''(7)

सेठ–साहूकारों द्वारा आदिवासियों की मजबूरी का फायदा उठाना आम बात हो गई है। यह समस्या भारत के विभिन्न क्षेत्रों में है। सेठ साहूकार ब्याज पर इन्हें पैसा देकर ब्याज का ब्याज तो वसूल करता ही है, साथ ही कर्ज पूरा चुका देने के पश्चात भी सेठ साहूकार इन्हें ऋण से मुक्त नहीं होने देते है। सागर साहब के माध्यम से छोटानागपुर के आदिवासियों की दशा उपन्यास में द्रष्टव्य है।

सागर साहब बताते हैं– ''छोटानागपुर के आदिवासी क्षेत्रों में सूद पर पैसा देना संसार का सबसे ज्यादा मुनाफा देनेवाला और सुरक्षित व्यवसाय है। इतना ब्याज और संसार में कहाँ मिल सकता है।''(8)

एक आदिवासी सूद समेत सारा कर्जा चुकाने के बाद भी कर्ज में ही डूबा रहता है। इस बात का स्पष्टीकरण एक आदिवासी और साहूकार के संवाद से होता है। कर्जा चुकाने के बाद '''महाजन ने आदिवासी ने कहा कि आज तुम बड़े खुश होंगे कि सारा कर्जा चुका दिया है।' उसने कहा– 'हाँ महाराज बहुत खुश हूँ।' साहूकार बोला– 'तो मुँह मीठा कराओ।' वह बोला– 'महाराज अब मेरे पास एक पैसा नहीं है।' साहूकार ने कहा– 'अच्छा तुम्हारे पास पैसा होता तो कितने पैसे से मुँह मीठा करा देते।' उसने कहा– 'महाराज चार आने से करा देता।' साहूकार ने कहा– 'ठीक है.....चार आने तुम्हारे नाम खाते में चढ़ाये लेता हूँ।'''(9)

पूँजीपति अपनी अर्थव्यवस्था मजबूत करने हेतु सदियों से इन जनजातियों का खून चूसते आ रहे हैं। जिस जंगल से उनका भरण–पोषण होता था, उसे भी सरकार और पूँजीपतियों ने उनसे छीन लिया है। आदिवासियों की निरीह तथा निरूद्देश्य जिंदगी की सच्चाई को उपन्यासकार ने सामने लाया है तथा लोकतंत्र की कटु आलोचना सागर साहब के माध्यम से की है। सागर साहब कहते हैं– ''उनके ऊपर हमने अपनी दुनिया लाद दी है। छल, कपट लालच और हिंसा की दुनिया के नीचे ये पिस गये हैं। अब न तो जंगल है, जो इनके पेट भरते थे, न नदियों में पानी है जहाँ से इनकी सौ जरूरतें पूरी होती थी। विकास के नाम पर इन्हें हमने लालची और झूठा–मक्कार बना दिया है। भाई ये तो हर तरफ से मारे गये हैं.....अब शहर में जाकर मजदूरी के अलावा क्या चारा है? एक जमाने के गर्वीले आदिवासी जिन्होंने बड़े–बड़े सम्राटों के साथ युद्ध किये थे आज निरीह, कमजोर और दया के पात्र बन गये हें। हमारे लोकतंत्र ने इन्हें यही दिया है।''(10)

उपर्युक्त उद्धरण में लेखक ने पाठक को इस बात से रू–ब–रू करवाया है कि आदिवासियों की स्थिति लोकतंत्रात्मक राज्य अर्थात् स्वाधीनता से पूर्व अच्छी थी। अपनी दुनिया में ये खुश थे। लोकतंत्रात्मक राज्य की स्थापना ने इनसे इनकी खुशियाँ छीनकर इनपर अनेक अत्याचार किया है। देश की सरकार पूँजीपतियों के साथ मिलकर दलितों, आदिवासियों पर निर्ममतापूर्वक अत्याचार करती है।

लेखक ने साजिद के माध्यम से इस यथार्थ को वर्णित किया है। साजिद कहता है– ''आजादी मिले चौथाई सदी बीत चुकी है और हमारे देश में लोगों की हालत जानवरों से भी बदतर है।''(11)

लेखक इस घोर अन्याय तथा अत्याचार को देखकर अपना गुस्सा, क्रोध, निराशा, शोषित वर्ग की पीड़ा की अनुभूति इत्यादि को साजिद के द्वारा प्रकट करते हैं। आदिवासियों का विकास के नाम पर शोषण होता है।

उपन्यासकार ने बैतूल के एक आदिवासी गाँव की स्थिति को दिखाया है, जहाँ विकास के नाम पर उन्हें खुलेआम लूटा जाता है। साजिद जब बैतूल के उसी आदिवासी गाँव में प्रवेश करता है, तो आदिवासी भाग खड़े होते हैं। यह देखकर साजिद को काफी हैरानी होती है– ''मैं हैरान था कि यह क्या हो रहा है, क्यों हो रहा है? ये लोग हमें क्या समझ रहे हैं। तब साथ वाले एक स्थानीय कार्यकर्ता ने बताया था कि ये लोग हमें बैंक वाले समझकर भाग रहे हैं।''(12)

इसके पीछे एक बड़ा कारण यह था कि बैंक वालों ने इन्हें कर्ज देकर कर्ज में पूरी तरह डूबा दिया था। बैंक मैंनेजर ने अपना 'टारगेट' पूरा करने तथा अपनी तरक्की के लिए आदिवासियों को बिना जरूरत का कर्ज देकर उन्हें कर्ज में बूरी तरह डूबा दिया है। विकास के नाम पर इन्हें जबरदस्ती कर्ज दिया जाता है, ताकि मैंनेजर का प्रमोशन हो। अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु बैंक मैंनेजर इस हद तक गिरते हैं, इसका वर्णन उपन्यास में इस प्रकार है– ''हर बैंक मैंनेजर अपना कैरियर बनाता रहा है और आदिवासी भयानक कर्ज में डूबने लगे। होते–होते स्थिति थोड़ी स्पष्ट होने लगी। किसी ने इन्हें बताया कि तुम लोगों के तो जानवर, खेत, घर बिक सकते हैं। ये समझ में आते ही ये डर गये और अब बैंक वालों को आता देखकर जंगल में भाग जाते है।''(13)

गलहौटी प्रोजेक्ट में यू.एन.डी.पी. के तहत किसी आदिवासी क्षेत्र में विकास का कोई मॉडल प्रोजेक्ट चलाने की बात होती है। साजिद जब मिस्टर ब्लैक से मिलता है, तो वह आदिवासियों के विकास के विषय में अपनी धारणा व्यक्त करता है। साजिद ने मिस्टर ब्लैक से कहा– ''पैसे से डेवलपमेंट नहीं होता। मलतब नालियाँ बना देना, हैंडपम्प लगा देना, कर्ज दे देना, खुशहाली गारंटी नहीं है। इस पर ब्लैक चौकें और पूछा, फिर डेवलपमेंट क्या है? मैंने कहा– लोगों को बदलना, लोगों को जागरूक बनाना, उनके अंदर बदलाव की चेतना पैदा करना, उनके अंदर संगठन और संयोजन की शक्तियों का विकास करना, उन्हें सामूहिकता से जोड़ना.....ये विकास है– यानी विकास की पहली शर्त है।''(14)

वर्तमान में भारत सरकार तथा जनजातीय कार्य–मंत्रालय के द्वारा आदिवासियों के लिए समग्र विकास तथा कल्याण हेतु अनेक योजनाएँ चलाई जा रही हैं। जनजातीय कार्य–मंत्रालय द्वारा गैर–सरकारी संगठनों को वित्तीय सहायता भी दी जाती है। राष्ट्रीय और सामूहिक विकास के लिए पूर्णतः सरकार पर आश्रित नहीं रहा जा सकता। भारत में समाज सेवा या कल्याण के लिए सामूहिक प्रयास अत्यावश्यक है, क्योंकि यह विकास सामूहिक प्रयासों से ही संभव है।

लेखक ने उपन्यास के नायक साजिद के माध्यम से अपनी बात कही है। साजिद कहता है– ''ये जंगल से जड़ी–बूटियाँ, झरबेरी के बेर, आँवला और दूसरी चीजें जमा करके बाजार में बेचा करते थे.... हमारे सुझाव पर यह काम पूरा गाँव मिलकर करता है और आमदनी बढ़ गयी। गाँव का एक अपना फण्ड बनाया गया है जिसमें दो–दो चार रूपये जाम होते हैं.....अभी पिछले महीने पूरे गाँव ने मिलकर तीन कुएँ खोदे है....मतलब पूरे गाँव के जवान लोग लग गये थे। दो–दो तीन–तीन दिन में एक कुआँ खुद गया था।''(15)

उद्योगपतियों ने उद्योग–धंधे की स्थापना करने के क्रम में आदिवासियों के हक को मारा है। अपने स्वार्थो की पूर्ति हेतु उद्योगपतियों ने आदिवासियों को घर से बेघर कर दिया है। आदिवासी क्षेत्रों पर रिपोर्ट तैयार करने के लिए साजिद मध्य प्रदेश के उन इलाकों में जाता है, जहाँ आदिवासियों को उत्पीड़न का शिकार बनाया गया था। मध्यप्रदेश के आदिवासी क्षेत्रों के इलाकों का प्रत्यक्ष वर्णन साजिद ने इस उद्धरण में किया है– ''मैं मध्यप्रदेश के उन आदिवासी क्षेत्रों में गया जहाँ उद्योग–धंधों के कारण आदिवासी उजड़ रहे थे। कारखानों का दूषित पानी नदी की मछलियाँ मार रहा था और गंदा पानी पीने से आदिवासियों में तरह–तरह की नयी बीमारियाँ फैल रही थीं। आदिवासियों की हजारों एकड़ जमीन पर उद्योग लग रहे थे, बाँध बन रहे थे और जाहिर था कि वहाँ पैदा होनेवाली बिजली उनके लिए नहीं थी।''(16)

आदिवासी समुदाय के कल्याण हेतु यदि साजिद जैसा कोई जागरूक देशवासी आगे बढ़ता है, तो वर्चस्ववादियों द्वारा उसे व्यवस्था के नियम–कानून की पट्टी पढ़ाकर पीछे धकेल दिया जाता है, या रोक दिया जाता है। उदाहरण के लिए– सक्सेना साहब साजिद से कहते हैं– ''उन्होंने साफ कहा कि अब अखबार आदिवासी अंचलों पर उतना बल नहीं देना चाहता क्योंकि यह संवदेनशील मामला है''(17)

उसके बाद हसन साजिद को कहते हैं–''ये तुमने ''इण्डस्ट्री' को 'टारगेट' क्यों किया? तुम्हें नहीं मालूम नेशनल चैम्बर ऑफ कॉमर्स ने तुम्हारी रिपोर्टो पर एडीटर–इन–चीफ को बड़ा सख्त खत लिखा है।''(18)

साजिद का दोस्त शकील जिसके बारे में साजिद ने कहा है– 'शकील अहमद अंसारी ये तो सत्ता का एक पहिया है, जो करोड़ो इन्सानों को कुचलती आगे बढ़ती चली जा रही है।''(19)

लेखक ने शकील को सत्ता की शक्ति का प्रतीक माना है, जिसकी वजह से सर्वहारा तथा आदिवासियों की दुर्दशा होती है। अनुसूचित जातियों, जनजातियों या सर्वहारा वर्ग पर अत्याचार सारे उच्चवर्गीय (राजनेता, उद्योगपति या अन्य वर्चस्ववादी लोग) एक साथ मिलकर करते हैं, इनका शोषण करते हैं।

असगर वजाहत ने बड़े धैर्य के साथ इन सत्ताधारियों तथा वर्चस्ववादियों की काली करतूतों का पर्दाफाश किया है। शकिल के माध्यम से लेखक ने इन पूँजीपतियों तथा राजनेताओं की सच्चाई सामने लाया है–शकील, साजिद को समझाते हुए कहता है– ''यार साजिद तुम इन लोगों से लड़ नहीं सकते। तुम सत्ता से टक्कर नहीं ले सकते। तुम्हारे अखबार का मालिक भी इण्डस्ट्रीयलिस्ट है। उसकी भी उसी इलाके में पेपर फैक्ट्री है जिसे प्रदेश सरकार ने बीस हजार एकड़ बाँस के जंगल सौ रूपये प्रति एकड़ की दर से नब्बे साल के लिए दे दिये हैं, अब बताओ....और बिजली ये तो जान है यार इण्डस्ट्री की बड़े बांध नहीं बनेंगे तो बिजली कहाँ से आयेगी?.... देखा इन लोगों ने अपना हर मामला जमाया हुआ है.... भई सरकारों से इनके क्या संबंध है, तुम्हें पता है। अखबार इनके हैं। पार्लियामेंट में इनके कितने लोग हैं तुम जानते हो। सर्विसेज के लोग तो इनके पहले से ही गुलाम है.....कला और संस्कृति पर इनका कब्जा है।''(20)

उपर्युक्त उद्धरण में सत्ताधारियों और उद्योगपतियों की सच्चाई को लेखक ने उजागर तो किया ही है, साथ ही यह भी द्रष्टव्य है कि कला और संस्कृति का भी व्यवसायीकरण हुआ है। आदिवासियों में अच्छे पढ़े–लिखे नौकरी करनेवालों का भी शोषण उनके उच्च पदाधिकारियों द्वारा किया जाता है। कथ्य में इस तरह के पात्र के रूप में बली सिंह रावत की दुःखदायी स्थिति वर्णित है जिनके पिताजी भेड़ियों से लड़ते हुए मारे जाते हैं। शहर में रावत इंसानी रूपी भेड़ियों का शिकार हो जाता है। इंसानी रूपी भेड़िये की भीड़ में रावत जैसा आदिवासी, जिसका प्रत्येक कार्य काबिलेतारीफ है, उसे बेवजह परेशान किया जाता है। रावत भोटिया जनजाति से है तथा जिंदगी की कठिनाइयों का सामना किया है। अपने संघर्ष के बल पर वह 'दैनिक राष्ट्र' में सब एडीटर है। अपनी जिंदगी के संघर्ष में उसे दो वक्त की रोटी भी नसीब नहीं होती थी। परंतु अपनी काबिलियत की वजह से वह 'सब–एडीटर' बनता है। बी.ए.पास करनेवाला रावत अपनी बिरादरी का प्रथम व्यक्ति था। ऑफिस में उच्च अधिकारियों द्वारा उसे इतना अधिक टॉर्चर किया जाता है कि वह मौत की स्थिति में आ जाता है। लेखक ने लिखा है– ''सच्चाई यह है कि उसके ऑफिस के 'पावरफुल लोगों' ने उसे सीधा जानकर उस पर

निशाना साधा है। वे नहीं चाहते कि कोई 'अन्य' ऊँचे पद पर पहुँचे।''(21)

'एम्स' के प्राइवेट वार्ड में एडमिट रावत की स्थिति दुखद है– ''सामने बेड पर रावत लेटा था। उसकी आँखें बन्द थीं। चेहरा लाल था। साँस बहुत तेजी से आ–जा रही थी। सीला धौकनी की तरह चल रहा था। कुछ नलियाँ उसकी नाम में लगी थी।''(22)

रावत की ये हालत इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि आदिवासी कितना भी शिक्षित क्यों न हो, उसका शोषण निश्चित है। लेखक ने आदिवासियों की दर्दनाक दास्तां इस उद्धरण में व्यक्त किया है– ''कितने हजार साल बाद किसी घुमंतू कबीले से एक लड़का अपने बाड़े से निकलकर बाहर आता है.....यही अपने आप में कमाल की बात है.....चमत्कार है..... क्योंकि हम जानते हैं कि हमारा समाज यथास्थितिवादी है.....जो जहाँ है, वहाँ रहे.....आगे बढ़ना, पीछे हटना अपराध है।''(23) पचपन घंटे मौत से जूझने के बाद चार बजे सुबह में उसकी मौत हो जाती है।

इस प्रकार आदिवासियों की जिन्दगी शोषण तथा उत्पीड़ने का दस्तावेज है। देश के किसी भी कोने में आदिवासी पूर्णतः सुरक्षित नहीं है। इनका सर्वांगीण विकास शिक्षा में है। अतः सरकार द्वारा इनहें शिक्षा की सम्पूर्ण सहूलियत दी जानी चाहिए। शिक्षा से इनमें जागरूकता पैदा होगी।

अतः इस वास्तविकता को हम झुठला नहीं सकते कि आदिवासी की जिंदगी में आज भी कोई बदलाव नहीं आया है। उनकी सोच, उनकी हालत कुछ भी नहीं बदली है। औद्योगिकरण के नाम पर आदिवासियों को बर्बाद किया जा रहा है।

संदर्भ ग्रन्थः

1. आलोचकों की आलोचना, डॉ० मनोज कुमार पाण्डेय, रचना प्रकाशन, संस्करण–2018, पृ०– 25
2. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 85
3. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 85
4. समकालीन हिन्दी उपन्यासः समय और संवेदना, डॉ. वी.के. अब्दुल जलील, वाणी प्रकाशन, संस्करण 2006, पृ०– 202
5. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 87
6. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 86
7. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 87
8. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 88
9. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 88
10. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 88
11. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 88
12. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 135–36
13. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 136
14. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 90
15. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 95
16. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 95
17. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 11
18. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 95
19. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 118
20. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 95
21. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 195
22. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 194
23. बरखा रचाई, असगर वजाहत, पृ०– 195